जयपुर घराने के कत्थक आचार्य पं. लक्ष्मीनारायण महाराज

सुरभि कुमावत
शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय,जयपुर
डॉ. आरती भट्ट तैलंग
एसोसिएट प्रोफेसर, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

ABSTRACT

Jaipur gharana is primitive gharana of kathak dance. Pandit Laxmi Narayan ji Maharaj was born in 1 July 1895 in the Jaipur district of Rajasthan state. Shri chaju Lal Ji was a dancer in Jaipur 'Gunijan Khana' and Pundit Lakshminarayan ji was also accompanying him. Laxmi Narayan ji performed Kathak and Tabla in many States, Darbar, Mehfhil, and temples. He was very hard working and disciplined. He was a great dancer and tabla player also. Pandit Laxmi Narayan ji transferred his art to his son Shri Girdhari ji Maharaj, which today is an established Kathak Acharya who does not need any introduction. He had many disciples, including Mallika Bhattacharya ji, Haridatt Kalla ji, music director Dan singh Ji, Bhanwar Lal Rao ji, Kanhaiya Lal ji Mastan, Maya Rao ji etc. He had a very good knowlage of Urdu language.He write many notetions in Urdu language. Never used to write notation always used to say only to remember in the mind. Pandit ji used to dance the old rare bandish of Jaipur gharana. His method of teaching was very good, he taught his disciple with great kindness, emphasized Riyaz very much. On tabla accompaniment with kathak dance they had special properties. Today the son and grandson of Pandit Laxmi Narayan ji are doing the kathak dance of the Jaipur gharana not only in the country but also in foreign countries.

Key Words : Jaipur Gharana, Kathak, Pandit Laxmi Narayan ji.

''संगीत एक ललित कला है, अर्थात् सुन्दर और मनोहर। ''संगीत कं न मोहयेतु'' अर्थात् संगीत से कौन मोहित नहीं होता। पाँचों ललित कलाओं में से सगीत ही एक ऐसी कला है, जिसे किसी बाह्य साधनों एवं उपकरणों की आवश्यकता नहीं रहती। संगीत का माध्यम नाद सर्वाधिक सूक्ष्म है, जिस कारण इससे प्राप्त आनन्द सबसे उच्च स्तरीय होता है।''[1]

''संसार में भारत ही ऐसा विशाल देश है, जहाँ प्रत्येक दृष्टि से अनेक विविधताएँ पाई जाती है। इस देश में जहाँ अनगिनत जातियाँ है वहीं अनेक भाषाएँ भी बोली जाती है। यहाँ पर सभी प्रकार की ऋतुएँ भी पाई जाती है। इसके अलावा यहाँ पर खान–पान, रहन–सहन, आचार–विचार और उपासना पद्धति में भी अनेक विविधताएँ देखने को मिलती हैं।

नृत्य की विभिन्न शैलियों की दृष्टि से भारत जहाँ एक अति समृद्ध देश है, वहीं नृत्यों में अनेक विविधताएँ भी हैं, जिनकी एकता उनकी जड़ में निहित है। लोकनृत्य की तो भारत में अनेकानेक शैलियाँ प्रचलित हैं जिनका भी मूल स्वर एक ही है। शास्त्रीय नृत्य की भी यहाँ अनेक शैलियां हैं, जो प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण एवं समृद्ध हैं।''[2]

नृत्य कला

समस्त संसार नर्तन क्रिया से सम्बद्ध है। इसी बात को इस प्रकार भी कह सकते हैं ''नृत्त क्रिया संसार के लिए प्रकृति का एक अनुपम उपहार है।'' साधारण दृष्टि से देखा जाय तो यह कहना अनुचित न होगा कि जब से ब्रह्मा की क्रिया का आरम्भ हुआ तब से ही नृत्त का जन्म हुआ। जलवासी मछली और आकाश में पक्षियों को देखिए या पृथ्वी पर पशुओं का निरीक्षण तो आप पायेंगे

कि सभी अपने–अपने ढंग से नृत्त में मग्न हैं। उल्लास में आकर वन में, या बागों में नाचते मोर को कुछ ने देखा होगा तथा मोर के उल्लासमय नृत्य के विषय में सुना भी होगा। कहने का आशय स्पष्ट है कि सभी चर–अचर अपने–अपने क्षेत्र में नृत्त–नृत्य करते रहते हैं।

''अभिनय दर्पण'' के लेखक श्री नन्दिकेश्वर शिव को नमस्कार करते हुए कहते हैं–

आग्किं भुवनं यस्य वाचिकं सर्ववाड्.मयम्।
आहार्य चन्द्रतारादि तं नुभः सात्विकं शिवम्।।

अर्थात्, ''हम उन सात्विक शिव को नमस्कार करते हैं, जिनका आग्किं संसार, वाचिक समस्त भाषाएँ और आहार्य चन्द्र तारागण हैं।'' संस्कृत की उक्त दो पंक्तियों में संसार से नृत्त की घनिष्ठता एवं संसार में उसका महत्त्व स्पष्ट हो जाता है।"[3]

''जब हृदयगत भावों की अभिव्यंजना अभिनय ताल और लय से की जाती है अर्थात् जब नाट्य और नृत्त दोनों का मेल होता है और तालबद्ध अंगसंचालन में अभिनय का भी समावेश होता है तो उसे नृत्य की संज्ञा दी जाती है। डॉ. लालमणि मिश्र के मतानुसार ''नृत्यकला वस्तुतः नाट्य और संगीत की संधि में स्थित है। एक ओर भाव भंगिमाओं के कारण उसका सम्बंध नाट्य से होता है तो दूसरी ओर लय और ताल का प्रबल आधार रहने के कारण वह संगीत के अन्तर्गत मानी जाती है।''[4]

''डॉ. शरच्चन्द्र पराजंये के मतानुसार'' नृत्य कला उतनी ही प्राचीन है जितनी मानव जाति। भारत में नृत्य की परम्परा वैदिक काल से पहले पाई जाती है। सिंधु सभ्यता में नृत्य संबंधी कुछ आकृतियाँ तथा मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। नृत्याभिनय वाली मूर्तियों को बनाना इस बात को प्रमाणित करता है कि उस समय नृत्य कला सामान्य जनता के मनोरंजन का माध्यम रही। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो की खुदाइयों में भी बहुत से चित्र एवं मूर्तियाँ मिली हैं जो नृत्यकला की प्राचीनता का प्रमाण है।''[5]

''सामान्य बोलचाल की भाषा में 'कथक' शब्द का अर्थ है कथा कहने वाला (कथत्र कथा, कःत्र कहो) है। कथक जगत में यह लोकोक्ति सर्वप्रचलित है कि –

''कथन करे सो कथक कहावे।''[6]

''कथक–उत्तर भारत की प्रमुख नृत्य विधा का नाम 'कथक' है। गायन व नृत्य के माध्यम से कथा की प्रस्तुति करने वाले कलाजीवी 'कथक' कहलाए, जिन्होंने कथक या नटवरी नृत्य' नाम से एक ऐसी शैली को जन्म दिया, जिसमें भाव–प्रधान, ताल प्रधान और चमत्कार–प्रधान तत्त्वों का समावेश था। कथक के क्षेत्र में जयपुर, लखनऊ और बनारस के घराने प्रसिद्ध है।''[7]

"भारतीय कला को जानने के लिए सूक्ष्म दृष्टि अपेक्षित हैं क्योंकि भारत में कला का विषय आत्मपरक रहा है। इसी कारण आध्यात्मिक कला–साधना द्वारा भारतीय कलाकार एवं उनकी लोक कल्याण कला अमर कहलायी।"[8]

"जयपुर घराना कथक नृत्य की प्राचीन 'हिन्दू शैली' का प्रतिनिधि घराना है जो किसी एक खानदान व स्थान में ही विकसित न होकर सम्पूर्ण राजस्थान में फैले हुए कथकों के सैकड़ो परिवारों का प्रतीक हैं।"[9]

भारतीय संगीत जगत में जयपुर घराने की कत्थक नृत्य कला के गह्वर उपासक एवं साधकों में से एक है, पं. लक्ष्मीनारायण जी महाराज जिनका सम्पूर्ण जीवन संगीत को ही समर्पित था।

पं. लक्ष्मीनारायण जी का जन्म 1 जुलाई सन् 1895 में राजस्थान राज्य के जयपुर जिले में छाजूलाल जी के घर हुआ। पं. लक्ष्मीनारायण जी के पिता श्री छाजूलाल जी जयपुर दरबार के गुणीजन खाने में राजनर्तक थे। इनकी माता जी का नाम धापा बाई था। छाजूलाल जी के तीन संतान थी दो पुत्र और एक पुत्री। बड़े भाई कन्हैया लाल जी, बहन लाली बाई और लक्ष्मीनारायण जी। लक्ष्मीनारायण जी ने लगभग 3–4 वर्ष की अल्पायु से ही सीखना प्रारम्भ कर दिया था। बालक लक्ष्मीनारायण अपने पिताजी के साथ गुणीजन खाने में जाया करते थे। घर में पिताजी से गायन, वादन और नृत्य की शिक्षा लेते तथा घर से बाहर भी गुणीजनों की संगत और संगीत का वातावरण होने के कारण संगीत में सहज रूचि बढ़ गई। बालक लक्ष्मीनारायण स्वभाव से बड़े ही सरल थे शरारती नहीं थे। अपने पिताजी के कहने पर किसी भी समय नृत्य करके दिखा देते थे। लक्ष्मीनारायण जी अपने बड़े भ्राता कन्हैयालाल जी के साथ नृत्य सीखते और करते थे। अपने पिता एवं बड़े भाई के साथ इन्होनें कई रियासतों में अपनी कला का प्रचार–प्रसार किया।

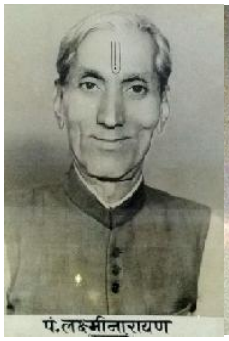

नृत्य की मुद्रा में
पंडित लक्ष्मी नारायण जी महाराज

पद्म विभूषण श्री बिरजू महाराज जी के साथ पंडित गिरधारी महाराज जी एवं उनकी शिष्य डॉजी गोस्वामी भारती ज्योति .

पंडित गिरधारी महाराज जी एवं उनके पुत्र श्री कमलकांत उस्ताद निसार हुसैन साहब को सम्मानित करते हुए

पं. लक्ष्मीनारायण जी ने अपने पिता छाजूलाल जी से शिक्षा लेने के साथ लखनऊ घराने के विद्वान गुरूओं से भी शिक्षा ली जिनमें कालका प्रसाद जी, अच्छन महाराज जी थे। अच्छन महाराज जी से इन्होनें गंडा भी बंधवाया था इसके अलावा तबले की शिक्षा दिल्ली घराने के उस्ताद गामी खाँ से भी ली।

पं. लक्ष्मीनारायण जी के पुत्र और शिष्य पं. गिरधारी महाराज जी के अनुसार पं. लक्ष्मीनारायण जी अपनी दैनिक दिनचर्या में प्रतिदिन प्रातः 4 बजे उठकर हमेशा ठण्डे पानी से ही स्नान करते थे चाहे पारा माइनस डिग्री में भी क्यों ना चले जाए यानि कितनी भी ठण्ड हो उनका नियम पक्का था और साथ ही 10 दण्ड और 21 बैठक का प्रतिदिन का नियम था जिससे शरीर खुला रहे किन्तु ज्यादा

कसरत नहीं करते थे क्योंकि वे कहते थे कि कसरत ज्यादा करने से शरीर की लावण्यता खत्म हो जाती हैं। इसी के साथ घर में पूजा–पाठ किए बगैर कही नहीं जाते थे चाहे कितना ही बड़ा कार्यक्रम हो और वारों के अनुसार विशेष देव की विशेष पूजा–अर्चना करते थे। उनकी ईश्वर भक्ति में प्रगाढ़ आस्था थी।

युवावस्था में पं. जी शेरवानी, चूड़ीदार पायजामा, अलीगढ़ पायजामा और सिर पर टोपी पहना करते थे जैसे तुर्की टोपी और पगड़ी (साफा) आदि। पगड़ी बहुत अच्छी बांधते थे और राज–दरबार में हमेशा पगड़ी बांधकर ही जाया करते थे।

पं. लक्ष्मीनारायण जी के तीन विवाह हुए। पहली व दूसरी पत्नी की मृत्यु के पश्चात् इनका विवाह अनूप बाई के साथ हुआ इनके पहले पुत्री हुई जिसकी अल्पायु में ही मृत्यु हो गई जिसका नाम लल्ली बाई था फिर गिरधारी लाल जी का जन्म हुआ फिर उनके बाद में एक भाई मुरलीधर हुए जिनकी जन्म के 8–10 महीने पश्चात् ज्यादा बीमार होने के कारण मृत्यु हो गई फिर राधा बाई हुई वे अभी वर्तमान में नहीं रही उनकी मृत्यु हो गई फिर कौशल्या बाई और उनके बाद मीरा (मधु) हुई फिर सबसे छोटे शिव किशोर जी जो अब नहीं रहे उन्हें लक्ष्मीनारायण जी ने अपने मित्र जुगल किशोर जी को गोद दे दिया था। वर्तमान मे पं. गिरधारी महाराज जी अपने पिता जी की कथक नृत्य कला एवं तबला वादन कला प्रचार–प्रसार देश में नहीं अपितु विदेश में भी कर रहे हैं।

पं. लक्ष्मीनारायण जी के शिष्य हरिदत्त कल्ला जी के अनुसार महाराज जी कत्थक के बारे में विस्तार से जानकारी देते थे और उनका अध्ययन का तरीका इतना अच्छा था कि जो भी सिखाते थे बड़ी तन्मयता से सीखाते थे। कभी किसी विद्यार्थी को डांटते नहीं थे प्यार से सिखाते थे और हमेशा बड़े ही तहजीब और अदब से बातचीत करते थे कभी भी तू–तड़ाके से बात नहीं करते थे।

निसार हुसैन खाँ साहब के अनुसार पं. लक्ष्मीनारायण जी की उर्दू भाषा पर बहुत पकड़ (कमाण्ड) थी और उतनी ही खूबसूरत उनकी लिखावट थी वे उर्दू भाषा में अपनी बंदिशें, गजलें आदि लिखते थे। उनका नाच पर जितना अधिकार था उतना ही तबले पर भी था। श्री भंवर लाल जी राव के अनुसार – नृत्य के साथ तबले की संगति में महाराज जी का जवाब नहीं था साथ ही लयकारी में – डेढ़ी, तिगुनी, सवा दो गुनी करना, आड़ की आड़ करना आदि विशेष गुण थे।

पं .लक्ष्मीनारायण जी के संदर्भ में मैनें बांसुरी वादक श्री बाबूलाल शर्मा जी से साक्षात्कार किया। वे बताते है कि जब मैं राजस्थान संगीत संस्थान में अपनी क्लास में जाता था तो मैनें पं. जी को कभी भी खाली बैठे नहीं देखा या तो वे अपने क्लास में स्टूडेंटस को तबले की शिक्षा दिया करते या फिर स्वयं तबला वादन किया करते थे अपना रियाज करते रहते थे। शांत स्वभाव के व्यक्ति के ज्यादा बाते नहीं किया करते थे। कभी किसी स्टूडेंस के कहने पर उसे नृत्य की मुद्राएँ भी सीखा दिया करते थे वे हमेशा कला से जुड़े रहना ही पसंद करते थे। जितने वे तबले के गुरू थे उतने ही कत्थक नृत्य के भी थे।

पं. जी के विषय सारंगीवादक पद्म श्री मोइनुद्दीन खाँ साहब जी से भी मैंने साक्षात्कार लिया। वे कहते है कि मेरे पिताजी स्व. महबूब खाँ (सारंगी वादक) लक्ष्मीनारायण जी की खूब तारीफ करते थे कि अपने समय के बहुत अच्छे कलाकार हुए है उनका बहुत नाम था और अपनी विधा में उन्होनें बहुत नाम कमाया और उन्होनें अपने पुत्र गिरधारी महाराज जी को अच्छा तैयार किया और मै

सोचता हूँ कि राजस्थान में नृत्य मे ं सबसे ज्यादा उनके विद्यार्थी है जो देश–विदेश में नाम कमा रहे है।

पंडित गिरधारी महाराज जी के साथ उनके पुत्र श्री कौशल कांत जी तबला वादन करते हुए

पं. जी अनुशासन प्रिय थे वे कहते थे कि किसी भी चीज को सीख एकाग्रता का होना अति आ परने, तोड़े आदि लिखवाते नह दिमाग में याद रखने पर ही जोर देते थे। जयपुर घराने का शुद्ध कथक किया करते थे। इनके कई शिष्य हुए जिनमें श्रीमती माया राव, श्री विरेन्द्र सिंह जी, मल्लिका भट्टाचार्य जी, श्री हरिदत्त कल्ला जी, श्री भंवरलाल राव जी, मधु बड़जात्या जी, संगीत निर्देशक दान सिंह, कन्हैया लाल जी मस्तान, पुत्र श्री गिरधारी लाल जी आदि। इनका सम्पूर्ण जीवन संगीत की सेवा के लिए ही पूर्णतः समर्पित था ऐसे महान नृत्याचार्य की 19 नवम्बर सन् 1972 को आकस्मिक मृत्यु हो गई जिससे संगीत जगत को बड़ा आघात पहुँचा। वर्तमान में महाराज जी के पुत्र एवं पौत्र जयपुर घराने की कत्थक नृत्य परम्परा को उनके आशीर्वाद और अपनी कठोर साधना से नई ऊँचाईयों पर ले जा रहे है।

पं. लक्ष्मी नारायण जी द्वारा रचित बंदिशें –

सादा आमद – झपताल

मात्रा	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
बोल	ताऽथैऽ	ततथैऽ	आऽथैऽ	ततथैऽ	थैऽऽता	तिगदाऽदिगदिग		थैऽऽत	ऽतथैऽ	तऽतथै	ऽतऽत	ता
चिन्ह	×		2			0		3				×

एक पल्ली (त्रिताल)

मात्रा	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
बोल	तकटधा	तृकधित	धिटकता	गदेगिन	तगेतृक	तीनाकिना	ऽऽतृक	तीनाकिना	तागेतृक	तीनाकिना	तकटधा	तृकधिट	तकटधा	तृकधिट	तकटधा	तृकधिट
	धाऽधाऽ	धाऽतक	टधातृक	धिटतक	टधातृक	धिटतक	टधातृक	धीटधाऽ	धाऽधाऽ	तकटधा	तृकधिट	तकटधा	तृकधिट	तकटधा	तृकधिट	धाऽधाऽ
	×				2				0				3			

पं. लक्ष्मीनारायण जी महाराज केवल एक श्रेष्ठ कलाकार ही नहीं थे अपितु गुणी शिक्षक भी थे। जिनके शिष्य प्रशिष्य आज जयपुर घराने के कत्थक को विश्व विख्यात कर रहे हैं।

सारांश

जयपुर घराना नृत्य का प्रमुख घराना रहा है। हृदय के भावों को अभिनव ताल और लय के संयोग से अंग संचालन के साथ प्रस्तुत किया जाए तो नृत्य हमारे सम्मुख होता है। किसी भी कला में पारंगत होने के लिए अनुशासन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जो कि पं. लक्ष्मीनारायण जी महाराज के जीवन में प्रतिबिम्बित होता है। साथ ही वातावरण भी मनुष्य के जीवन में अहम् भूमिका निभाता है जैसा कि पं. लक्ष्मीनारायण जी अपने पिता श्री छाजूलाल जी के साथ जयपुर गुणीजन खाने में जाया करते थे। ये एक श्रेष्ठ गायक, वादक, नृतक होने के साथ–साथ एक गुणी शिक्षक भी थे इन्होनें अपने हुनर को स्थानान्तरित कर अपने कई प्रतिभावान शिष्य तैयार किए। कठिन लयकारी तबले में इनका विशेष गुण था। अपने शोध कार्य के दौरान इनके जीवन में मुझे संगीत कला के प्रति कठोर साधना एवं समर्पण दिखाई देता है।

संदर्भ

1. शर्मा, प्रो. स्वतंत्र – सौन्दर्य, रस एवं संगीत, पृ.सं. 55
2. सिंह, गुरू विक्रम – नटवरी (कथक) नृत्य क्रमिक पुस्तक माला प्रथम पुष्प, पृ.सं. 7
3. सिंह, गुरू विक्रम – नटवरी (कथक) नृत्य क्रमिक पुस्तक माला प्रथम पुष्प, पृ.सं. 1–2
4. शर्मा, डॉ. नीरा– भारतीय लोकनृत्यों में हरियाणा और राजस्थान, पृ.सं. 7
5. शर्मा, डॉ. नीरा– भारतीय लोकनृत्यों में हरियाणा और राजस्थान, पृ.सं. 8
6. टांक, डॉ. माया – ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में कथक नृत्यक, पृ.सं.1
7. गर्ग, डॉ. लक्ष्मीनारायण– नंदिकेश्वर प्रणीत अभिनय दर्पण और जयदेव प्रणीत गीत गोविन्द, पृ.सं. 32
8. गुप्ता, डॉ. सुषमा देवी – भारतीय ललित कलाएँ एवं नृत्य कला, पृ. सं. प
9. वाजपेयी, रश्मि – कथक प्रसंग, पृ.सं. 148
10 महाराज, पं. गिरधारी जी – साक्षात्कार द्वारा शोधार्थी, जून, 2014
11. कल्ला, श्री हरिदत्त जी – साक्षात्कार द्वारा शोधार्थी, जनवरी, 2015
12. राव, श्री भंवर लाल जी – साक्षात्कार द्वारा शोधार्थी, अप्रेल, 2015
13. हुसैन खाँ, उस्ताद निसार जी – साक्षात्कार द्वारा शोधार्थी, फरवरी, 2016
14. शर्मा, श्री बाबूलाल जी– साक्षात्कार द्वारा शोधार्थी, मई 2016
15. खाँ साहबए श्री मोइनुद्दीन जी– साक्षात्कार द्वारा शोधार्थी, मई, 2016